ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म्

ओ३म्

वेदों में विधि एवम् निषेध वाक्य
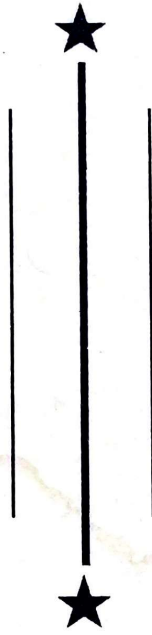
लेखक :

डॉ० योगेन्द्र कुमार एम.ए.पी.एच.डी.

संस्करण

१९९७

ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म्

यह पुस्तक अपने पू. पिता जी स्व. देवी दास जी की स्मृति में दानी महानुभाव श्री अवतार कृष्ण पुरी जी ने प्रकाशित कराई। लेखक का उन्हें हार्दिक धन्यवाद है

पता :
डॉ० योगेन्द्र कुमार
१३२ पुराना हस्पताल जम्मू-१८० ००१
दूरभाष - ५४८००६

मूल्य २०-००

विषय सूची

प्रार्थना

बुराई को त्यागें भलाई करें हम।
तुम्हारे ही गीतों को गाते रहें हम।।
वेदों के सागर को पाकर सदा ही।
गोते उसी में लगाते रहें हम ।।
दुरितों को त्यागें सदा दूर भागें।
भावों को अच्छे जगाते रहें हम।।
मेरा ज्ञान क्या है तेरा ही दिया है।
सभी को हमेशा सुनाते रहें हम।।
समर्पित तुम्हीं को तुम्हारा ही वैभव ।
हृदय से तुम्हीं को बुलाते रहें हम।।

प्राक्कथन

ओ३म्

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव। यजु-३०-३

अर्थ-(सवितः) हे सकल जगत् के उत्पादक (देव) सब ऐश्वर्यों के दाता परमेश्वर (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दूरितानि) दुष्कर्मों को, दुर्गुण और दुर्व्यसनों को (परासुव) दूर कर दीजिये। (यत्) जो (भद्रम्) कल्याण कारक गुण, कर्म और स्वभाव हैं (तत्) उसे (आसुव) दीजिए।

भावार्थ-

वेद के इस मन्त्र में दो प्रार्थनाएँ की गई हैं। प्रथम प्रार्थना है कि हे परमेश्वर मेरी बुराईयों को दूर कर दीजिये। दूसरी प्रार्थना है कि मुझमें अच्छाईयाँ भर दीजिये। किसी पात्र में अच्छे पदार्थ तभी रखे जाते हैं जब उस पात्र को प्रथम धोकर साफ कर लिया जाय, उसकी गन्दगी को दूर कर दिया जाय, फिर चाहे उसमें दूध, दही, शहद आदि कुछ भी रखिये। उसी प्रकार श्रेष्ठ जीवन के निर्माण के लिये, यशस्वी बनने के लिये तथा ईश्वर की प्राप्ति के लिये प्रथम जीवन की बुराईयों को दूर करना होगा तभी उसमें अच्छाईयाँ स्थिर रह सकेगीं।

यही आधार बनाकर वेदाध्ययन करना चाहिये। वेद ईश्वरीय ज्ञान है। उसी का आदेश मानकर वेद मार्ग पर चलना चाहिये और बाद

में दूसरों को चलाना भी चाहिये महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने आर्य समाज के दूसरे नियम में लिखा है-

'वेद का पढ़ना पढ़ना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है'' इस नियम के साथ यदि यह भी जोड़ दिया जाय कि 'वेद मार्ग पर चलना और चलाना सब आर्यों का परमधर्म है तभी यह नियम जीवन के लिये सार्थकबन जाता है । वेद का पढ़ना पढ़ना और सुनना सुनाना यह कार्य एक अध्यापक भी कर सकता है परन्तु उस पर चलाना और चलना साधक का काम है । इसी लिये वेद पढ़ने से पहले यह प्रार्थना करनी चाहिये ।

संश्रुतेन गमेमहिमाश्रुतेन विराधिषि । अथर्व-१-१-४

अर्थात् हम सुने हुए वेद ज्ञान के अनुसार चलें। हम सुनी हुई वेद वाणी के विरुद्ध कभी न चलें। तथा

मप्येवास्तु मयि श्रुतम् । अथ. १-९-२

मेरा सुना हुआ वेदज्ञान मेरे जीवन के कल्याण के लिये होवे।

आईये। इन्हीं विचारों को लेकर वेदाघ्ययन करें। वेद जिन बातों को छोड़ने के लिये कहता है उन्हें छोड़ें और जिन्हें अपनाने के लिये कहता हैं उन्हें अपना लेवें।

छोड़ने योग्य बातों के लिये मैने निषेध वाक्य का प्रयोग किया है। आईये वेद के अनुसार पहले छोड़ने योग्य कर्मों पर विचार करें और उनका सर्वथा परित्याग भी करें तभी हम सच्चे आर्य कहला सकते हैं।

प्रथम अध्याय

वेदों में निषेध वाक्य

वेद में 'मा' शब्द

वेद में 'मा' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। जहाँ वेद में कहा है "अजां माहिन्सी" अर्थात् बकरी को मत मारो यहां "मा" शब्द एक अव्यय शब्द है जिसका प्रयोग सर्वत्र इसी रूप में होगा। इसमें न विभक्ति लगेगी, न वचन लगेगा न लिंग परिवर्तन होगा इसका अर्थ है "नहीं"

एक "मा" शब्द सर्वनाम है जो अस्मद् शब्द के द्विवचन में बनता है।

"माम्" (मुझको) इसके स्थान पर "त्वामौ द्वितीयाया:" इस सूत्र सें मां के स्थान पर "मा" आदेश हो जाता है।

वेद में जहां ऐसी प्रार्थना हो "वाक् पतिर्मा पुनातु" वाणी का पति परमेश्वर मुझे पवित्र करे वहां "मा" का अर्थ मुझको लेना चाहिये।

वेद में निषेध अर्थ में जहां "मा" शब्द का प्रयोग हुया है वह हमें इस प्रकरण में अभिप्रेत है।

आइयि कुछ ऐसे वाक्यों को देखें जिनमें कुछ कर्मों को न करने के लिये मा शब्द का प्रयोग हुआ है।

माहिर्भूः । यजु ६-१२

(अहि:) सांप (मा) मत (भूः) हो।

अविंमा हिंसीः।

(अविम्) भेड़ को (मा) मत (हिंसीः) मारो।

इमं मा हिंसीरेक शफं पशुम्। यजु -१३-४८

(इमम्) इस (एक शफम्) जिनके खुर फटे हुए नहीं हैं ऐसे घोड़े गधे आदि उपयोगी (पशुम्) जानवरो को (मा) मत (हिंसीः) मारो।

मा यज्ञपतिं (हिंसिष्टम्)। यजु ४-३

(यज्ञपतिम्) यजमान को (मा) मत (हिंसिष्टम्) मारो। याज्ञिक मनुष्यों की हिंसा मत करो।

माघ शंसः। यजु १-१

(अघ शंसः) पाप की प्रशंसा या पाप का सर्मथन (मा) मत करो।

मा हिंसीत पुरुषान् पशुंश्च। अ ३-२८-५

(पुरुषान्) मनुष्यों को (पशून्च) और पशुओं को (मा) मत (हिंसीत) मारो । मनुष्य और पशुओं की हिंसा नहीं करनी चाहिये।

गृहा मा विभीत। यजु ३-४१ (गृहा) गृहस्थ आश्रम से

(मा) मत (विभीत) डरो। इस आश्रम का मज़बूती से पालन करो।

मा नो गामश्वं पुरुषं वधीः। अथ १०-१-२९

(नः) हमारी (गाय) गाय को (अश्वम्) घोड़े को (पुरुषम्) पुरुष को (मा) मत (वधीः) मारो। गाय, घोड़ा, आदि उपयोगी पशु एवं निरपराध मनुष्य की हिंसा मत करो।

माऽमृतात्। ऋ ७-१५१-४

(अमृतात्) अमृत को (मा) मत त्यागो। अपने अमरण स्वरूप को कभी मत भूलो तथा अपने परमात्मा से जुड़े रहो।

मागामनागामदितिं वधिष्ठ। ऋ ८-१०२-१५

(अनागाम्) निरपराधी (अदितिम्) अखन्डनीय (गाम्) गाय को (मा) मत (वधिष्ट) वध करो। गाय निरपराधी एवम् न मारने योग्य पशु है अतः इसका वध मत करो।

मा गृध कस्यस्विद्धनम्। यजु-४०-१

(कस्यस्वित्) किसी के भी (धनम्) धन को (मा) मत (गृध) लालच की दृष्टि से देखो। किसी दूसरे के धन में लालच मत करो। सृष्टि के सभी पदार्थों का स्वामी ईश्वर है तुम इस धन के स्वामी बनने का लालच मत करो।

मा जिह्वतम्। यजु ५-७

(मा) मत (जिह्वतम्) कुटिल व्यवहार करो। किसी के साथ छल कपट का व्यवहार मत करो।

अग्न सख्ये मा रिषाम वंय तव। साम ६६

(अग्ने) हे अग्रणी परमात्मा (तब) तेरी (सख्ये) मित्रता में (वयम्) हम (मारिषाम) दूरन होवें। परमात्मा से मिले रहो।

वेद में 'न' शब्द

वेद में 'न' शब्द तीन अर्थो मे प्रयुक्त हुआ है। न शब्द नहीं अर्थ में जैसे-न दुरुक्ताय स्पृहेत्। ऋ-१-४१-दोगली बात करने वालो को न चाहो। न उपमा अर्थ मै जैसे 'शिशुं न' बच्चे की तरह जहाँ न: शब्द विर्सगों के साथ हो वहाँ उसका अर्थ 'हमारा' होता है जैसे - 'धियो यो न: प्रचोदयात्' हमारी बुद्धियों को प्रेरित करे। हमें यहाँ पर न शब्द निषेधार्थक अभिप्रेत है-

निषेध अर्थ में न शब्द-

न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ऋ १-४१-९

(दुरुक्ताय) दूसरी बात करने वाले, दोगली बात करने वाले या एक बात करके उसे अस्वीकार करने वाले व्यक्ति को (न) नही (स्पृहेत्) चाहो। असत्य वक्ता का विश्वास न करो। दोगला व्यक्ति अच्छा नहीं होता।

मांसंवा तदेव नाश्नीयात्। अ ९-६-९

(वा) अथवा (मांसम्) मांस को (तदेव) उसे ही (न) नहीं (अश्नी यात्) खावे। मांस नहीं खाना चाहिये।

अनागो हत्या वै भीमा। अ १०-१-२९

(अनाग:) निरपराध की (हत्या) हत्या (वै) निश्चय से(भीमा) भयानक है। निरपराधी प्राणी को मत मारो।

यथा मासं यथा सुरा यथाक्षा अधि देवने। यथा पुंसो वृषण्यत स्त्रियां निहन्यते मन: । अ ६-६९-१

(यथा) जैसा (मांसम्) मांस (यथा) जैसी (सुरा) शराब (यथा) जैसा (अधिदेवने) जूआ खेलने में (यथा) जैसे (स्त्रियाम्) स्त्रियों में (वृषण्यत) व्यमिचारी होने से (पुंस:) मनुष्य का (मन:) मन (निहन्यते) मर जाता है। मांस, शराब, जूआ, व्यमिचार इनमें व्यक्ति मनन के साथ प्रवृत्त नहीं होता है। इन व्यसनों से व्यक्ति का मन मर जाता है। वह व्यक्ति सांसारिक और आत्मिक उन्नति नहीं कर पाता है।

यथा भूमिमृतमना मृतान्मृतमनस्तरा।

यथोत मम्रुषोमनो एवेर्ष्योमृतं मन: । ११ अथ ६-१८-२

(यथा) जैसे (भूमि:) मिट्टी (मृतमना) मरी हुई है (मृतात्) मरे हुए से भी अधिक (मृतमनस्तरा) मरी हुई है (यथा)जैसे(उत) और (मन:) मन (मम्रुषो) मर जाता है उसी तरह (ईष्य:) ईर्ष्या करने वाले का मन भी (मृत एव) मरा हुआ ही है। दूसरों की उन्नति को देख कर जलने वाला ईर्ष्यालु मन मर जाता है। वह आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता अत: ईर्ष्या मत करो।

अकर्मादस्यु।

(अकर्मा) काम न करने वाला (दस्यु) चौर है। अत: कर्महीन न बनो। जो कर्म करके धन नहीं कमाता वही दूसरों की चौरी करने लगता है।

छिन्नन्तु सर्वे अनृतं वदन्तम्।

(अनृतम्) झूठ (वदन्तम्) तोलने वाले को (सर्वे) सभीजन (छिन्नन्तु) दण्डित करें। झूठ मत बोलो।

न ब्राह्मणो हिंसितव्यः । अ ५-१२-६

(ब्राह्मणः) विद्वान् (न) नहीं (हिंसितव्यः) मारने योग्य है। विद्वानों की हिन्सा नहीं करनी चाहिये।

12

न ब्राह्मणस्य गां जग्ध्वा राष्ट्रे जागार कश्चन । अ ५-१९-१०

(ब्राह्मणस्य) विद्वान् की (गाम्) वाणी को(जग्ध्वा) मारकर(राष्ट्रे) राष्ट्र मे (कश्चन) कोई भी (न) नहीं जागा है। ब्राह्मण की वाणी को राष्ट्र में बन्द मत करो। उससे राष्ट्र में जागृति बनी रहती है।

न कि देवा इनिमसि । साम-१७६

(देवाः) देवता (न) नहीं (इनिमसि) परस्पर द्वेष करें। विद्वानों को आपस में द्वेष नहीं करना चाहिये।

नत्वाद्रिवः परा शुल्काय दीयसे । साम-२९१

(अद्रिवः) अंधकार को दूर करनेवाले सर्वज्ञ परमेश्वर, (त्वा) तुझे (पराशुल्काय) अपार धन के बदले में भी (न) नहीं (दीयसे) दिया जा सकता है। एक तरफ परमेश्वर हो और दूसरी तरफ दुनियाँ की दौलत हो तो भी परमेश्वर को नहीं छोड़ना चाहिये क्यों कि सम्पूर्ण ऐश्वर्य का वही स्वामी है।

न ते वज्रो नियंसते । साम-४१३

(ते) तुझ जीवात्मा का (वज्रो) (बल) (न) नहीं (नियंसते) दबता है। आत्मा का दृढ़ संकल्प कभी भी दबाया नहीं जा सकता है। अतः अपने में आत्म हीनता कभी मत लाओ।

आरे बाधस्व दुच्छुनाम् । साम-६२७

(दुच्छुनाम्) दुष्ट पागल कुत्तो के समान मनुष्यों को (आरे) दूर

घ्नन्तोविश्वा अपद्विषः। ऋ ९-६४.२६

(विश्वा) सम्पूर्ण (द्विषः) द्वेषों को (अपघ्नन्तः) मारो। किसी प्रकार का द्वेष मत करो।

ऋतस्य पन्थां न तरन्ति दुष्कृतः। ऋ ९-७-७४-६

(दुष्कृतः) दुश्चरित्र व्यक्ति (ऋतस्य पन्थां) सत्य के मार्ग को (न) नहीं (तरन्ति) पार करते हैं। दुश्चरित्र मत बनो।

अहं इन्द्रो न पराजिग्ये इद्धनम्।

(अहम्) मैं आत्मा (इन्द्रः) इन्द्र हूँ (न पराजिग्ये) पराजित न होना (इद्) ही (धनम्) मेरा धन है। अपनी आत्मा को कभी दुर्बल मत समझो।

माश्रुतेन विराधिषि। अथ-१-१-४

(अश्रुतेन) सुने हुए वेद मार्ग के विरुद्ध (मत) (विराधिषि) चलो।

वेद के बताये हुए मार्ग के विरुद्ध आचरण मत करो।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात्।

(कवयः) मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने (सप्त) सात (मर्यादाः) मर्यादाओं को (ततक्षुः) चिन्तन के शस्त्र से छीलकर बनाया है। (तासाम्) उनमें से (एकामिद्) एक का भी (अभि) उल्लंघन करने पर (मानव) (अंहुरः) पापी (गात्) बन जाता है।

सात मर्यादायेंये हैं :

१. स्तेनम् - चौरी करना।
२. तल्पारोहणम् - व्यभिचार करना।
३. सुरापानम् - शराब पीना।
४. भ्रूण हत्या - गर्भ के बच्चे को मारना।

५. ब्रह्म हत्या - विद्वान की हत्या करना।

६. दुष्कृतस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवनम् - बुरे कर्म को बार बार करना।

७. पातके ऽ नृतोद्यम् - पाप करके झूठ बोलना।

मर्यादा का अर्थ है मनुष्य को खा जाने वाली। जो व्यक्ति इन बुराइयों को अपनाता है उसका जीवन नष्ट हो जाता है। इस मन्त्र से सात बातों का वेद में निषेध किया गया है :

चौरी मत करो। व्यभिचार मत करो। शराब मत पीयो। गर्भ के बच्चे को मत मारो। विद्वान् की हत्या मत करो। दुष्कर्म को वार वार मत करो। एक वार भूल होजाने के बाद उसे छोड़ दो, दो बारा मत करो। पाप करके बचने के लिये झूठ मत बोलो।

ये खादन्ति गर्भान् केशवान् तान् इतो नाशयामसि। अर्थव.

अंडे एंव चूजे नहीं खाने चाहिये। जो इन्हें खाते हैं उनके आध्यात्मिक जीवन का विनाश हो जाता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी वे विनष्ट हो जाते हैं।

अंसूर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृता। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्म हनो जना। यजु०

(तमसा) गहरे (अन्धेन) अन्धकार से धिरे हुए (ते लोका) वे जन्म स्थान (असूर्या नाम) प्रकाश रहित हैं। (यि केच) जो कोई (आत्महनो जनाः) आत्म हत्या करने वाले जन हैं (ते) वे प्रेत्य मरकर (तान्) उन जन्मों को (अभिगच्छन्ति) जाते हैं।

आत्म हत्या मत करो। जो कर्म का परित्याग करता है वह भी आत्मा का हनन करता है।

अहमनृतात्सत्यमुपैमि।

(अहम्) मैं (अनृतात्) झूठ से (सत्यम्) सत्य के (उपैमि) समीप

जाता हूँ। असत्य को त्यागो सत्य को अपनाओ।

हन्ति असत्।

समझदार व्यक्ति (असत्) असत्य को (हन्ति) मारता है। झूठ मत बोलो। असत्य का परित्याग करो।

दृषदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र। यजु०

(इन्द्र) हे आत्मन् (रक्ष) राक्षस को (दृषदेव) मिट्टी के ढेले की तरह (प्रमृण) मसल दो। अविद्या, क्रूरता, ईर्ष्या, काम क्रोध, लालच, अभिमान आदि राक्षसी विचारों को त्यागदो।

ऊर्ध्वं यज्ञं नयतं मा जिह्वरतम्। यजु० ५-१७

(ऊर्ध्वम्) महान् उन्नत (यज्ञम्) यज्ञ को (नयतम्) करने वाले के साथ (मा) मत (जिह्वरतम्) कुटिलता करो या कड़ुवा बोलो । यज्ञ कार्यों में बाधा मत डालो । श्रेष्ठ पुरुषों के साथ कुटिलता मत करो ।

मृत्यो मुक्षीय (माऽमृतात्)। ऋ ७-५९-१२

पूर्ण आयुदेकर- (मृत्योः) मृत्यु से (मुक्षीय) मुक्त करो (अमृतात्) अमर रूप से (मा)अलग मत करो। मृत्यु के बन्धन से मुक्त होजाओ। पूर्ण आयु प्राप्त करो अपनी आत्मा के अमर रूप को मत भूलो।

न स सखा यो न ददाति सख्ये। ऋ १०-११७ ४

(यः) जो (सख्ये) मित्र के लिये (न) नहीं (ददाति)। देता है (सः) वह (सखा न) मित्र नहीं है। मित्र के मांगने पर कभी नहीं न करो उसकी सहायता करो। मित्र के लिये नहीं दूँगा ऐसा मत कहो।

मोघम् अन्नं विन्दते अप्रचेताः। ऋ १०-११७-६

(अप्रचेताः) अज्ञानी (मोघम्) व्यर्थ में (अन्नम्) अन्न को (विन्दते) पाता है । अज्ञानी मत बनो ज्ञानी बनो।

केवलाघो भवति केवलादि। ऋ.१०-११७-६

(केवलादि) अकेलाखाने वाला (केवलाघो) केवल पापी (भवति) होता है।

अकेले मत खाओ। दूसरों को खिला कर खाओ।

वदन् ब्रह्माऽवदतो बनीयान्। ऋ१०-११७-७

(वदन्) बोलते हुए (ब्रह्मा) वेदों का विद्वान् (अवदतो) न बोलने वाले से (बनीयान्) श्रेष्ठ है। विद्वानों को मौन धारण नहीं करना चाहिये।

इन्द्र जहि पुमांसं यातु धानम्। ऋ. ७-१०५-२४

(इन्द्र) हे आत्मन् तुम (यातुधानम्) राक्षसी (पुमांसम्) पुरुष को जहि त्याग दो। राक्षस का साथ मत दो।

आरे बाधस्व दुच्छुनाम्। ऋ.९-६६-१९

(आरे) अरे मानव ! (दुच्छुनाम्) पागल कुत्तों के समान मानवों को (बाधस्व) रोको। पागल कुत्ते के समान दुष्टों को हानि पहुंचाने वाले मत बनो।

ऋतस्य पन्थां नतरन्ति दुष्कृतः। ऋ.९-७४-६

(दुष्कृतः) दुःचरित्र व्यक्ति (ऋतस्य) सत्यके (पन्थाम्) मार्ग को (नतरन्ति)

पार नहीं कर पाते हैं। दुश्चरित्र मत बनो।

अतिथिर्यच्छ्रोत्रियस्तस्मात् पूर्वोनाश्नीयात्। ऋ. ९-६-७

(यत्) जो (श्रोत्रियः) वेदों का विद्वान (अतिथि) अतिथि हो (तस्मात्) उससे (पूर्वः) पहले (नाश्नीयात्) न खावे।

अतिथि से पहले भोजन न करो।

मा हिंसीत पुरुषान् पशून्च । अथर्व ३-२८-५

(पुरुषान्) मानवों को (पशून्) पशुओं को (मा) मत (हिंसीत्) मारो।

निरपराधी मनुष्य एवं पशु की हिंसा मत करो।

विश्वा अप द्विषोजहि । साम्

(विश्वा सम्पूर्ण) (द्विषः) द्वेषों को (अपजहि) त्याग दो। किसी कारण से भी द्वेष मत करो।

अप दुर्मतिम् जहि । यजु ११-७

(दुर्मतिम्) मूर्खों को दुष्टों को (अपजहि) छोड़ दो मूर्खों का और दुष्टों का संग मत करो।

दुरितानि परासुव । यजु

(दुरितानि) दुर्गुण और दुर्व्यसनों को (परासुव) दूर करो। वेद कहता है कि सम्पूर्ण दुर्गुण और दुर्व्यसनों को दूर करो।

द्वितीय अध्याय

वेदों में विधि वाक्य

अब तक वेदों के उन वाक्यों पर विचार किया गया जिन में दुर्गुण और दुर्व्यसनों को त्यागने की बात कही गई है। इन बातों को त्यागने से जीवन का कल्याण ही कल्याण है। जब जब इन का मानव ने उल्लंघन किया है तब तब हानि ही उठाई है। मनुष्य को क्या नहीं करना चाहिये। यह स्पष्ट बताया गया है।

करने योग्य कर्मों के लिये वेद का आदेश इस प्रकार है :

क्रतुभिः सुक्रतुर्भूः। ऋ. १-९१-२

(क्रतुभिः) यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों से (सुक्रतुः) अच्छे कर्म करने वाला बन। मनुष्य को सुकर्मा बनना चाहिये।

श्रद्धया विन्दते वसु। ऋ. १०-१५१-४

(श्रद्धया) सत्य को धारण करने से (वसु) ऐश्वर्य (विन्दते) पाता है।

सत्य को धारण करना श्रद्धा कहलाता है। श्रद्धापूर्वक व्यवहार से मानव ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।

स्वस्तिपन्थामनुचरेम। ऋ. ५-५१-१५

(स्वस्ति) कल्याण के (पन्थाम्) मार्ग का (अनुचरेम) अनुसरण करें।

कल्याण के मार्ग पर चलें।

पुनर्ददता ऽघ्नता जानता संगमेमहि।

(पुनः) और (ददता) दान देने वालों के साथ (अघ्नता:) अहिंसकों के साथ (जानता) ज्ञानियों के साथ (संगमेमहि) मिल कर चलें। मनुष्य को चाहिये वह दान अहिंसा और विवेक का समर्थन करे तथा इन गुणों से सम्पन्न व्यक्तियों की संगति करे।

स्वयं यजस्व। ऋ. १०-८१-५

(स्वयम्) स्वयम् (यजस्व) यज्ञ करो। यज्ञ कर्म, विद्वानों का सत्कार, एवम् दान स्वयं करो।

स्वयं तन्वं कल्पयस्व। वहीं

(स्वयम्) स्वयम् (तन्वं) शरीर का (कल्पयस्व) ध्यान रखो। अपने स्वास्थ का स्वयं ध्यान रखो।

स्वयं जुषस्व। वहीं

(स्वयम्) स्वयम् (जुषस्व) प्रेम करो। स्वयम् प्राणिमात्र से और परमेश्वर से प्यार करो।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः। ऋ. १०-१३७-१

(उत) और (अवहितम्) नीचे गिरे हुए व्यक्ति को (देवा) प्रत्येक देवता (पुनः) फिर (उन्नयथा) ऊपर उठावे। पतित पावन बनो गिरे हुए को सहारा दो, उसका जीवन महान बनाओ। देवताओं का यही कार्य है।

क्रतुभिः सुक्रतुर्भूः। ऋ. १-९१-२

(क्रतुभिः) यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों से (सुक्रतुः) अच्छे कर्म करने वाला बन मनुष्य को सुकर्मा बनना चाहिये।

श्रद्धया विन्दते वसु। ऋ. १०-१५१-४

(श्रद्धया) सत्य को धारण करने से (वसु) ऐश्वर्य (विन्दते) पाता है। सत्य को धारण करना श्रद्धा कहलाता है। श्रद्धापूर्वक व्यवहार से मानव ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।

उतागश्चक्रुशं देवा देवा जीवयथा पुनः।

(उत) और (आगः) पाप (चक्रुशम्) करने वाले को (देवा देवा) प्रत्येक देवता पुनः फिर (जीवयथा) जीवन दान दे। पापी को पाप से छुड़ाना तथा उसे जीवनदान देना प्रत्येक विद्वान् का कर्तव्य है।

संगच्छध्वम्। ऋ. १०-११९-२

(सम्) मिलकर (गच्छध्वम्) चलना चाहिये। संगठन में शक्ति है सदा मिलकर चलो।

संवदध्वम्। वही

(सम्) मिलकर (वदध्वम्) बोलना चाहिये। मिलकर बोलने से आवाज में बल आता है।

समाना हृदयानिवः। वही-

(वः) तुम्हारे(हृदयानि) हृदय(समाना) समान होवें। दया, करुणा, सहानुभूति समान रुप से सभी परस्पर करते रहें।

पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः। ऋ.६-७५-१४

(विश्वतः) चारों तरफ से (पुमान्) एक पुरुष (पुमांसम्) दूसरे पुरुष की (परिपातु) चारों तरफ से रक्षा करे। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की सदा सहायता करे।

अश्माभवतु नस्तनूः। ऋ.६-७५-१२

(नः) हमारा (तनूः) शरीर (अश्मा) पत्थर के समान पक्का

(भवतु) होवे। शारीरिक दृष्टिसे स्वस्थ बनों, मजबूत बनो।

ब्रह्म वर्म ममान्तरम्। ऋ.६-७५-२२

(अन्तरम्) भीतर रहने वाला (ब्रह्म) परमेश्वर या ज्ञान (मम) मेरा (वर्म) कवच है। ज्ञान की वृद्धि करो। परमेश्वर पर विश्वास रखो वह सर्वत्र तुम्हारी रक्षा करेगा।

अध: पश्यस्च मोपरि। ऋ.८-३३-१९

हे नारी। तुम (अध:) नीचे (पश्यस्व) देखो (उपरि) ऊपर (मा) नहीं।

नारी को चलते समय नीचे देखकर चलना चाहिये सीना तान कर नहीं चलना चाहिये।

सर्वं तदिन्द्र ते वशे। ऋ. ८-९२-९३

(इन्द्र) हे परमेश्वर (तत्सर्वम्) वह सब (ते) तेरे (वशे) वश में है।

सब कुछ परमेश्वर के आधीन है यह विश्वास सर्वदा रखो।

भद्रंभद्रं न आभर। ऋ.८-९३-२८

(न:) हमारे लिये (हि परमेश्वर) (मद्रंभद्रम्) कल्याण ही कल्याण अच्छाईयां ही अच्छाईयां (आभर) भर दो। जीवन में अच्छाईयाँ ही करते रहो।

शुद्धा: पूता: भवत यज्ञियास:। ऋ.१०-१८-२

(यज्ञियास:) यज्ञकर्म करते हुए (शुद्धा:) शुद्ध और (पूता:) (पवित्र) (भवत) हो जाओ। जीवन की यवित्रता के लिये यज्ञ अवश्य करो।

मृत्यो: पदं योपन्तो यदैत। ऋ.१०-१८-२

(यदा) जब (मृत्यो:) मृत्यु के ऊपर (पदम्) पैर (योपयन्त:)

रखते हुए (एत) चलोगे। मृत्यु से मत डरो, तुम अमर हो।

द्राघीय आयुः प्रतंर दधानः। वहीं

(प्रतरम्) श्रेष्ठ (द्राघीय) लम्बी (आयु) आयु (दधानः) धारण करते हुए रहो। श्रेष्ठ लम्बी आयु धारण करो।

आप्यायमाना प्रजया धनेन। वहीं

(प्रजया) सन्तान एवम् (धनेन) घन का सुख प्राप्त करो।

मधुमन्मे परायणम् मधुमत्पुनरागमनम्। ऋ. १०-२४-६

(मे) मेरा (परायणम्) जाना (मधुमत्) मधुर हो। (पुनरागमनम्) दोवारा आना (मधुमत्) मधुर हो। हमारा कहीं जाना और आनामधुरव्यवहार से भरा होना चाहिये।

भद्रा वधुर्भवति यत्सुपेशाः स्वयं सा मित्र वनुते जने चित्।

ऋ. १०-२७-१२

(सा) वह (सुपेशाः) सुन्दर (वधूः) वहू (भद्रा) अच्छी होती है (स्वयम्) जो स्वयं ही (जने चित्) मनुष्यों में से (मित्रम्) अपने मित्र पति को (वनुते) चुनती है। नारी का विवाह स्वयम्बर के तरीके से करो।

वेद नावः समुद्रियः। ऋ.१-२५-७

(समुद्रियः) संसार समुद्र की (वेद) वेद (नावः) नाव है।

वेद का ज्ञान संसार समुद्र को पार लगाने के लिये नाव के समान है। अतः वेद पढ़ो।

स्थिरावः सन्तु आयुधाः। ऋ. ७-३९-२

(वः) तुम्हारे (आयुधाः) अस्त्र (स्थिरा) मजबूत (सन्तु) होवें।

अपने पास सुरक्षा के लिये और दुष्टों को दण्ड देने के लिये अच्छे अस्त्र रखने चाहिये।

आनो भद्रा क्रतवो यन्तु विश्वतः। ऋ. १-४१-९

(नः) हमारे लिये (विश्वतः) चारों तरफ से (भद्रा क्रतवः) श्रेष्ठ विचार, श्रेष्ठ कर्म (आ यन्तु) आवें। अच्छाई जहाँ से मिले वहाँ से ग्रहण कर लो।

देवानां सख्यमुपसेदिमा वयम्। ऋ.१-८९-२

(वयम्) हम (देवानाम्) विद्वानों की (सख्यम्) मित्रता को (उपसेदिमा) प्राप्त करें। विद्वानों को अपना मित्र बनाओ उनसे अपने सुख दुःख की बात कहो।

त्वं सोम क्रतुभिः सुक्रतुर्भूः। ऋ.१-९१-२

(सोम) शान्त स्वभाव के मानव (त्वम्) तुम (क्रतुभिः) सुकर्मों को करके (सुक्रतुः) अच्छे कर्म करने वाले (भूः) होवो। श्रेष्ठ कर्मों के कर्ता बनो।

अहंदाशुषे विभजामि भोजनम्। ऋ.१०-४८-१

(अहम्) मैं परमात्मा (दाशुषे) अन्नदान देने वाले के लिये (भोजनम्) भोजन (विभजामि) देता हूँ बांटता हूँ। धन देने वाले के लिये परमात्मा और धन देता है अतः दानी बनो।

अहं इन्द्रो न पराजिग्ये इद्धनम्। ऋ.१०-४८-५

(अहम्) मैं (इन्द्रः) आत्मा हूँ (न) नहीं (पराजिग्ये) पराजित हुँगा (इत) यही (धनम्) मेरा धन है। अमर आत्मा किसी से भी पराजित नहीं होता यह मानकर सर्वदा आगे बढ़ो, निर्भय रहो।

अयं मे हस्तो भगवान्। ऋ.१०-६०-१२

(मे) मेरा (अयम्) यह (हस्तः) हाथ (भगवान्) ऐश्वर्यवान् है। हाथों के परिश्रम से ऐश्वर्य वान् बनो।

अयम् विश्व भषेजः। वहीं

(अयम्) यह हाथ (विश्व भेषजः) सबकी औषधि है। किसी के सिर पर प्यार का, रक्षा का सान्त्वना का हाथ रख दो वह उस व्यक्ति के लिये औषधि बन जायेगा।

द्यावा भूमि जनयन् देव एकः। ऋ.१०-८१-३

(द्यावा) द्यूलोक को (भूमि) भूमि को (जनयन्) उत्पन्न करते हुए (एकः देवः) एक ही देव विराजमान है। सृष्टि का कर्ता, धर्ता, संहर्ता, एक ही परमेश्वर को जानो।

यो देवानां नामधा एक एव। ऋ. १०-८२-३

(यः) जो परमेश्वर (देवानाम्) देवों का सृष्टि के पदार्थों का (एक एव) एक ही (नामधा) नाम रखने वाला है। परमेश्वर ने ही वेदज्ञान द्वारा पदार्थों के नाम रखे हैं यही मानो।

स्योना भव श्वशुरेभ्य :। ऋ. १४-२-२७

हे नारी। तू (श्वशुरेभ्यः) ससुर और उसके भाईयों के लिये (स्योना) सुख देने वाली (भव) हो वहू को चाहिये कि वह अपने ससुराल में ससुर को सुख देने वाली हो।

स्योना पत्ये। वहीं

(पत्ये) पति के लिये पत्नी (स्योना) सुख देने वाली हो। पत्नी को पति के साथ सुखदायी व्यवहार करना चाहिये।

देवान् यज्ञेन बोधय। ऋ. १९-६२-१

(देवान्) पृथ्वी, जल, वायु, आदि देवताओं को (यज्ञेन) यज्ञ के द्वारा(बोधय) जगाओ। यज्ञ कर्म से प्रदूषण को दूर करके वायु, जल, आकाश पृथ्वी के प्रदूषण को दूर करना चाहिये।

बुध्येम शरदः शतम्। ऋ. १९-६७-३

(शतम्) सौ (शरदः) शरद ऋतुओं तक (बुध्येम) ज्ञान प्राप्त करें जीवन भर ज्ञान प्राप्त करो।

अदीना : स्याम शरदः शतम्। यजु. ३६-२४

(शतम्) सौ (शरदः) शरद ऋतुओं तक अर्थात् सौवर्ष तक (अदीनाः) दीनता रहित (स्याम)होवें। सौ बर्ष तक अदीन होकर जीओ, स्वावलम्बी बनो।

मे मनः शिवसकल्पमस्तु। यजु ३४-१

(मे) मेरा (मनः) मन (शिव सकल्पम्) कल्याणकारी संकल्प करने वाला (अस्तु) होवे। सर्वदा मनसे आत्म कल्याण का तथा दूसरों के कल्याण का संकल्प करते रहें।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्। यजु २५-१५

(देवानाम्) देवताओं की (भद्रा) कल्याण कारी (सुमतिः) अच्छी बुद्धि (ऋजूयताम्) सरलता से प्राप्त करावें। देवताओं की सी श्रेष्ठ बुद्धि बनाओ।

भद्रम् कर्णेभिः श्रृणुयामः। यजु. २५-२१

(कर्णेभिः) कानों से (भद्रभ्) अच्छा (श्रृणुयामः) सुनें। कानों से अच्छा सुनो।

भद्रं पश्येमाक्षभिः। वहीं

(अक्षभिः) आखों से (भद्रम्) अच्छा (पश्येम) (देखें) आखों से अच्छे दृश्य देखें।

प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते। य. १५-५४

(त्वम्) तुम (इष्टापूर्ते) इष्ट और आपूर्त कर्म के लिये (प्रति

जागृहि) जगादो। इष्ट आत्म कल्याण के कर्म पूर्त समाज कल्याण के कर्म सर्वदा करते रहें।

सभ्यञ्चः सव्रताः भूत्वा वाचं वदत भद्रया।

(सम्यञ्चः) अच्छी प्रकार (सव्रताः) समान व्रतवाले बन कर (भद्रया) कल्याण कारी भावों से (वाचम्)वाणी को (वदत) बोलो अच्छे काम मिलकर करो तथा परस्पर मीठा बोलो।

जाया पत्ये मधुमतिंवाचं वदतु। अ. ३-३०-२

(जाया) पत्नी (पत्ये) पति के साथ (मधुमतीम्) मधुर (वाचम्) वाणी को (वदतु) बोले। पत्नी पति से मीठी वाणी बोले।

मयि एवास्तु मयि श्रुतम्। अ. १-१-२

(मयि) मेरे द्वारा (श्रुतम्) सुना हुआ (मयि एव) मेरे भीतर ही स्थाई (अस्तु) होवे। हम सुनी हुई वेद वाणी के अनुसार जीवन बनावें।

जिह्वाः अग्रे मधु मे। अ. १-३४-२

(मे) मेरे (जिहायाः) जीभके (अग्रे) आगे (मधु) मिठास होवे। जीभ से मीठा बोलो

अप्सु भेषजम्। अ. १-४-४

(अप्सु) जल में (भेषेजम्) औषधि है। स्वास्थ्यवर्धक जल पीयो

यदन्तरं तद् बाह्यं यद् बाह्यं तदन्तरम्। अ. २-३०-४

(यदन्तरं) जो भीतर हो (तद्) वही (बाह्यम्) बाहर हो (यद्वाह्यं) जो बाहर हो (तद् अन्तरम्) वही भीतर हो। बाहर भीतर जीवन एक जैसा बनाओ। मन और वचन में एकता लाओ।

अनु व्रतः पितुः पुत्रो। अ. ३-२४-२

(पुत्रः) पुत्र (पितुः) पिता के (अनुव्रतः) व्रतो का पालन करने

पुत्र पिता के श्रेष्ठ कार्यों पर चले।

अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त। अ. ३-३०-५

(अन्य:) एक (अन्यस्मै) दूसरे से (वल्गु) सत्य (वदन्त) बोलें। आपस में सत्य बोलो।

समानी प्रपा सहवोऽन्नभाग:। अ.३-३०-६

(व:) तुम्हारे (प्रपा) जल पीने के स्थान (समानी) समान हो (अन्न-भाग:) खाने के स्थान एक साथ होवें। जल और अन्न सभी को समान मिलें।

सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवा भित:। अ.३-३०-६

(अरा) पहिये के अरे (नाभिम्) नाभि के (अभित:) चारों तरफ (इव) जैसे (सम्यञ्च:) अच्छी तरह से (अग्नि) यज्ञाग्नि के चारों तरफ बैठ कर (सपर्यत) यज्ञ करो। सम्पूर्ण परिवार हवनकुण्ड के चारों तरफ बैठ कर हवन करे।

वृहन्नेषामधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति। अ.४-१६-१

(एषाम्) सम्पूर्ण जगत का (वृहन्) महान् (अधिष्ठाता) सबको अपने भीतर रखकर स्थिर विराट् सर्वव्ययापक परमेश्वर (अन्तिकात्) समीपता से (इव) जैसे (पश्यति) देखता है। जीवात्मा में भी व्यापक परमात्मा अति समीपता से जीवात्मा के पाप पुण्य के कर्मों को जान रहा है।

य: सत्यवाद्यति तं सृजन्तु। अ. ४-१६-६

(य:) जो (सत्यवाद्यति) बोलता है (तम्) उसे (सृजन्तु) निर्मित करें। सत्यवादी पुरुष पैदा करो तथा सत्य का साथ दो।

भद्रं गृहं कृणुथ। अ. ४-२१-६

(गृहम्) घर को (भद्रम्) कल्याणकारी अच्छा (कृणुथ) बनाओ। गृहस्था श्रम को प्रशंसनीय बनाओ।

प्रियं मा देवेषु। अ. १९-६२-१

हे ईश्वर (मा) मुझे (देवेषु) विद्वानों में (प्रियम्) प्रिय (कृणु) करो। व्यक्ति वही महान् है जिसकी विद्वान् प्रशंसा करें।

प्रियम सर्वस्य पश्यतः।

(सर्वस्य) सबकी (पश्यतः) दृष्टि में (प्रियम्) प्रिय बनाओ। व्यक्ति को सबका प्यारा बनना चाहिये।

शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर। अ. ३-२४-५

(शतहस्त) सेकड़ों हाथों से (समाहर) इकट्ठा करो (सहस्रहस्त) सेकडों हाथों में (संकिर) बांटो।

खूब कमाओ और खूब दान करो।

आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतो ऽ यनम्। अ. ५-३०-७

(आरोहरणं) उन्नति के पथ पर (आक्रमणम्) चलना या चढ़ना (जीवतो जीवतो) प्रत्येक जीवका (अयनम्) उद्देश्य है। प्रत्येक मनुष्य को उन्नति के शिखर पर चढ़ने का प्रयत्न करना चाहिये।

सुप्रशस्तं सखानो असि परमंच बन्धु। अ. ५-११-११

हे ईश्वर ! तुम (नः) हम जीवात्माओं के (प्रशस्तम्) प्रशंसनीय (सखा) सखा हो। (च) और (परमम्) परम (बन्धु) बन्धु हो।

अपने सुख दुख की बातें जिससे की जाती हैं वह सखा होता है। तथा जो प्यार के बन्धन में बाधे रहता है उसे बन्धु कहते हैं। ऐसा सखा और बन्धु उस ईश्वर को ही मानो।

समानी वः आकूतिः । अ. ६-६४-३

(वः) तुम्हारे (आकूतिः) विचार लक्ष्य (समानी) समान होवें।

विचारों में समानता लेकर तथा मिलकर एक लक्ष्य की तरफ बढ़ो।

सर्वान् पथो अनृण आक्षियेम । अ. ६-११७-३

(सर्वान् पथः) सभी दिशाओं में (अनृण) ऋण रहित (आक्षियेम) रहें।

ईश्वर का ऋण, माता पिता का ऋण, ऋषियों का ऋण तथा अन्य किसी व्यक्ति का ऋण उतारते रहो।

शुद्धा पूता योषितो यज्ञिया । अ. ६-१२२-५

(यज्ञिया) यज्ञ करने वाली (योषितः) स्त्रियाँ (शुद्धा पूता) शुद्ध और पवित्र बनी रहती हैं। स्त्रियों को यज्ञ करना चाहिये।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः । अ.७-५-१

(देवाः) देवताओं ने (यज्ञेन) यज्ञ भावना से, त्याग भावना से (यज्ञम्) यज्ञ को (अयजन्त) किया। यह धन परमेश्वर का है मेरा नहीं है इस भावना से यज्ञ करो

विष्णोः कर्माणि पश्यत ।

विष्णु के, व्यापक ईश्वर के (कर्माणि) सृष्टि के कर्म को (पश्यत) देखो। ईश्वर की महिमा उसकी सृष्टि से प्रतीत होती है। पहले उसके कार्य को देखो फिर उसके प्रति विश्वास उत्पन्न होगा।

उद्यानं ते पुरुष नावयानम् । अ. ८-१-६

(पुरुष) हे आत्मन् (ते) तेरा (उत् यानम्) उन्नति की तरफ गमन हो (अवयानम्) पतन की तरफ (न) नहीं।

व्यक्ति को उन्नति की तरफ चलना चाहिये पतन की तरफ नहीं।

एकम् सत्। ऋ १-६४-४६

(सत्) सत्य (एकम्) एक ही है। जिसकी सत्ता है ऐसा सत्य स्वरुप परमात्मा एक ही है। उसी सत्य को मानो। अर्थात् अनेक भगवान् न मानो।

इहैवस्तंमा वियौष्टम्। अ. १४-१-२२

(इह एव) गृहस्थ आश्रम में ही (स्तम्) रहो (मा) मत (वियौष्टम्) वियुक्त होवो। पति पत्नी को एक जगह मिलकर रहना चाहिये वियोग ठीक नहीं।

आरोह तमसो ज्योतिः। अ. ८-१-८

(तमसः) अन्धकार से (ज्योतिः) प्रकाश की तरफ (आरोह) चढ़ो। अज्ञान से ज्ञान की तरफ चलते रहो।

इष्टं च वा एष पूर्तंच गृहाणाम् अश्नाति यः पूर्वो ऽ तिथे रश्नाति। अ. ९-६-१

(यः) जो गृहस्थी (अतिथः) अतिथि से (पूर्वः) पहले (अश्नाति) भोजन करता है (एष) वह (गृहाणाम्) घरों के (इष्टम्) इष्ट (वा) अथवा (च) और (पूर्तम्) पूर्त को (अश्नाति) खाता है। अतिथि को भोजन कराने के बाद भोजन करो।

सनातनमेनमाहु। अ. १०-८-२३

(एनम्) उस परमेश्वर को (सनातनम्) अनादि (आहु) कहते हैं। जो परमेश्वर को अनादि मानता है वह सनातमधर्म को मानने वाला है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। अ. ११-५-१९

(देवाः) विद्वानों ने (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य के (तपसा) तप से (मृत्युम्) मृत्यु को (उपाघ्नत) मारा। ब्रह्मचारी रहो और दीर्घायु प्राप्त करो।

देवा: संमनसो भवन्ति। अ. ११-५-१

(देवा:) विद्वान (संमनस:) समान मन वाले (भवन्ति) होते हैं। विद्वानों के मन मिले रहें। मिलकर एक जैसा सही सोचें ।

सत्यं वृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञ : पृथिवीं धारयन्ति।

अ. १२-१-१

(सत्यम्) सच्चाई (वृहदृतम्) अनुशासन (उग्रम्) वीरता (दीक्षा) कर्तव्य पालन की भावना (तप:) तपस्या (ब्रह्म) ज्ञान (यज्ञ:) त्याग (पृथिवीम्) पृथिवी को (धारयन्ति) धारण करते हैं। देश भक्तों को सच्चा, अनुशासित, वीर, कर्तव्य निष्ठ, तपस्वी, ज्ञानी और त्यागी, होना चाहिये।

माता भूमि पुत्रो ऽ हं पृथिव्या: । अ.१२-१-१२

(भूमि) भूमि (माता) माता है (अहम्) मैं (पृथिव्या:) पृथ्वी का (पुत्र) पुत्र हूँ । राष्ट्र भूमि को माता मानो।

तस्मै हिरण्य वक्षसे पृथिव्या अकरं नम: । अ. १२-१-२६

(तस्यै) उस (हिरण्य वक्षसे) सोना जिसके सीने में है। ऐसी (पृथिव्या) पृथवी के लिये (नम:) नमस्कार (अकरम्) किया है। राष्ट्र भूमि को नमस्कार करो (बन्दे मातरम् का नारा इसी से बना है)

वयम् तुभ्यंवलिहृत: स्याम । अ.१२-१-६२

(तुभ्यम्) राष्ट्र भूमि तेरे लिये (वयम्) हम (वलिहृत:) वलिदान देने वाले (स्याम) होवें। राष्ट्र भूमि की रक्षा के लिये यदि वलिदान भी देना हो तो दे देना चाहिये।

एक एव । अ.१३-४-१२

परमेश्वर (एक) एक (एव) ही है। परमेश्वर एक ही है

एकम् सत्। ऋ १-६४-४६

(सत्) सत्य (एकम्) एक ही है। जिसकी सत्ता है ऐसा सत्य स्वरुप परमात्मा एक ही है। उसी सत्य को मानो। अर्थात् अनेक भगवान् न मानो।

इहैवस्तंमा वियौष्टम्। अ. १४-१-२२

(इह एव) गृहस्थ आश्रम में ही (स्तम्) रहो (मा) मत (वियौष्टम्) वियुक्त होवो। पति पत्नी को एक जगह मिलकर रहना चाहिये वियोग ठीक नहीं।

आरोह तमसो ज्योतिः। अ. ८-१-८

(तमसः) अन्धकार से (ज्योतिः) प्रकाश की तरफ (आरोह) चढो। अज्ञान से ज्ञान की तरफ चलते रहो।

इष्टं च वा एष पूर्तंच गृहाणाम् अश्नाति यः पूर्वो ऽ तिथे रश्नाति। अ. ९-६-१

(यः) जो गृहस्थी (अतिथः) अतिथि से (पूर्वः) पहले (अश्नाति) भोजन करता है (एष) वह (गृहाणाम्) घरों के (इष्टम्) इष्ट (वा) अथवा (च) और (पूर्तम्) पूर्त को (अश्नाति) खाता है। अतिथि को भोजन कराने के वाद भोजन करो।

सनातनमेनमाहु। अ. १०-८-२३

(एनम्) उस परमेश्वर को (सनातनम्) अनादि (आहु) कहते हैं। जो परमेश्वर को अनादि मानता है वह सनातमधर्म को मानने वाला है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाध्नत। अ. ११-५-१९

(देवाः) विद्वानों ने (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य के (तपसा) तप से (मृत्युम्) मृत्यु को (उपाघ्नत) मारा। ब्रह्मचारी रहो और दीर्घायु प्राप्त करो।

(उपएमसि) उपासना करें। प्रातः सायम् दोनों समय संध्या करो।

भद्रा हिनः प्रमति। साम०

(नः) हमारी (प्रमति) (बुद्धि) (हि) निश्चय से (भद्रा) कल्याण कारी होवे। बुद्धि से सदा अच्छा सोचो।

आजुह्वत् हव्यमानुषक् शर्म भक्षीत दैव्यम्। साम ८२

(आनुषक्) लगातार मनुष्य (हव्यम्) हवन सामग्री को (आजुह्वत्) आहुति में देते हुए (दैव्यम्) अलौकिक (शर्म) सुख को (भक्षीत) भोगता है। लगातार हवन करने वाले अलौकिक सुख भोगते हैं।

वृहद् वयोहिभानवे ऽर्चा। साम०

(भानवे) प्रकाश स्वरुप परमात्मा के लिये (वृहद् वयः) लम्बी आयुतक (अर्च) पूजा करो। ईश्वर की उपासना लम्बी आयु तक करते रहो।

उपह्वरे गिरीणाम् संगमेच नदीनाम्। धिया विप्रो ऽ जायत।

साम-१४३

(गिरीणम्) पर्वतों की (उपह्वरे) गुफाओं में या घाटियों में (च) और (नदीनाम्) नदियों के (संगमे) संगम पर (धिया) ध्यान करने से व्यक्ति (विप्रः) विद्वान (अजायत) बने। ध्यान लगाने के दो स्थान श्रेष्ठ हैं पर्वतों की गुफाएँ या घाटियां तथा नदियों के किनारे या संगमस्थल।

ध्वान्तम् ऊर्णुहि। साम-३१९

(ध्वान्तम्) अज्ञानान्धकार को (ऊर्णुहि) दूर करो। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

देवस्य पश्य काव्यम् न ममार न जीर्यति। साम-३२५

(देवस्य) परमेश्वर के (काव्यम्) वेद को (पश्य) देखो (न ममार) न मरा है (न) न (जीर्यति) पुराना होता है। वेद ज्ञान अनादि और नित्य है।

विश्वा अप द्विषोजहि। साम-४७९

(विश्वा) सम्पूर्ण (द्विषः) द्वेष को (अपजहि) दूर हटादे।

द्वेष मत करो।

सोमः पवते जनिता मतीनाम्। साम-५२७

(सोमः) सृष्टिकर्ता शान्त प्रभु (पवते) जीवात्माओं को पवित्र करने वाला है। (मतीनाम्) बुद्धियों को (जनिता) उत्पन्न करने वाला है। सोम का अर्थ यहा परमेश्वर है वही जीवात्मा को पवित्र करने वाला है। उसी से श्रेष्ठ बुद्धि की प्रार्थना करो। वेद में सोम का अर्थ शराब नहीं है ।

अतप्त तनु : न तदामो अश्नुते। साम०

(अतप्त तनुः) शरीर से तप न करने वाला व्यक्ति (तत्) उस (आमः) परमेश्वर के आनन्द को (न) नहीं (अश्नुते) अनुभव करता है। तपस्वी बनो।

सखाय अनिषीदत पुनानाय प्रगायत। साम०

(सखायः) मित्रो (आनिषीदत) चारों तरफ इकठ्ठे बैठो (पुनानाय) पवित्रता के लिये (प्रगायत) वेदगान करो। एक जगह बैठ कर वेद पाठ करो।

शिशुं न यज्ञैः परिभूषत श्रिये। साम०

(शिशुं न) बच्चे की तरह सरलभाव से। छल कपट रहित होकर (यज्ञैः) यज्ञ कर्मों से (परिभूषत) चारों तरफ से सुशोभित हो जाओ। यज्ञों में सरलमन से बैठो।

आदित्य व्रते वयं तवानागसो अदितये स्याम। साम०।

(आदित्य) है अखंडनीय ईश्वर (वयम्) हम (अदितये) तेरे अखंडनीय आनन्द को पाने के लिये (तव व्रते) तेरा व्रत धारण करके (अनागसः) पाप रहित (स्याम) होवें। पाप रहित होकर परमात्मा को प्राप्त करो।

मन्त्र श्रुत्यं चरामसि। साम०

(मन्त्र श्रुत्यंम्) वेद मन्त्र में हम जो सुनें उसीपर (चरामसि) चलें। वेद के आदेश का व्यवहार में पालन करो।

इन्द्राय साम गायत। साम०

(इन्द्राय) परमेश्वर के लिये (साम) सामवेद को स्वरों में (गायत) गाओ। अर्थात् सस्वर वेद पाठ करो।

तपसा तप्यध्वम्। यजु० ९-१८

(तपसा) तप से (तप्यध्वम्) तप करो। तप करने वाले तथा महनती बनो।

यद् ग्रामे यदरण्ये यत् समायां यदिन्द्रिये यदेन : चकृमा वयमिदं तदव यजामहे। यजु० ३-४५

(वयम्) हम (ग्रामे) गाँव में या समूह में (यत्) जो (अरण्ये) जंगल में (यत्) जो (सभायाम्) सभा में (यत्) जो (इन्द्रिये) जिस इन्द्रिय से (एनः) पाप (चकृमः) करें (इंदतत्) उसे (अवयजामहे) यज्ञ पर बैठकर छोड़ते हैं। यज्ञवेदी पर बैठकर पापों को त्यागने का व्रत लेना चाहिये।

देहि मे ददामि ते। यजु० ३-५०

तुम (मे) मेरे लिये (देहि) दो मैं (ते) तुम्हारे लिये (ददामि) देता हूँ। परमेश्वर के लिये तुम समय दो वह तुम्हें सब कुछ देगा संसार में भी लेन देन करते रहो जिससे तुम कोई वस्तु लो उसे कुछ दो भी।

गृहान् एभि मनसा मोदमानः। यजु०

(मनसा मोदमानः) प्रसन्नमनसे (गृहान्) घरों में (एमि) आवें। अपने घरों में या मित्रों के घरों में प्रसन्न मन से प्रवेश करो।

अग्ने नय सुपथा राये। यजु० ४०-१६

(अग्ने) हे अग्रणी परमेश्वर (राये) धन के लिये (सुपथा) अच्छे मार्ग से (नय) ले चलो। इमानदारी से धन कमाओ।

सुप्रजा: प्रजाभि: स्याम। यजु० ७-२८

(प्रजाभि:) संतान के द्वारा (सुप्रजा) अच्छी संतान वाले (स्याम) होवें। संतान सुयोग्य बनाओ।

तन्तुं तन्वन् रजस: भानुमन्विहि। यजु०

(रजस:) संसार के (तन्तुम्) तानेको (तन्वन्) बुनते हुए (भानुम्) सूर्य का (अनुइहि) अनुकरण करो।

संसार में विवेकपूर्वक कर्म करो तथा ज्ञान का प्रकाश फैलाओ।

अनुल्वणं वयत जोगुपामपो। यजु०

(जोगुपाम्) महापुरुषो के (अनुल्वणम्) उलझन रहित (अप:) कर्मों को (वयत) करो। महापुरुषों के कर्मों का अनुकरण करो।

ज्योतिष्मत: पथो रक्ष। यजु०

(ज्योतिष्मत:) ज्ञान के (पथ:) मार्ग की (रक्ष) रक्षा करो। स्वाध्याय से प्राचीन साहित्य की रक्षा करो।

मनुर्भव। यजु०

(मनु:) ज्ञानी (भव) बनो मनन करने वाले ज्ञानी बनो।

जनय दैव्यम् जनम्। यजु०

(दैव्यम्) दिव्य (जनम्) जन को (जनय) पैदा करो। गुरु योग्य शिष्य पैदा करे तथा पिता योग्य पुत्र को पैदा करे।

वर्चस्वान् अहं मनुष्येषु भूयासम्। यजु०

(मनुष्येषु) मनुष्यों में (अहम्) मैं (वर्चस्वान्) वर्चस्वी (भूयासम्)

हो जाऊं। मनुष्य को यशस्वी बनना चाहिये।

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्। यजु०

(आयु:) सम्पूर्ण आयु (यज्ञेन) यज्ञमय (कल्पताम्) बनाओ जीवन भर यज्ञ करते रहो।

वाचस्पतिर्वाचंनः स्वदतु। यजु०

(वाचस्पतिः) वेदवाणी के स्वामी परमात्मन् (नः) हमारी (वाचम्) वाणी को (स्वदतु) मीठा बना दो। वाणी को (स्वदतु) मीठा बना दो। वाणी से मीठा बोलो।

अश्वत्थे वो निषदनम्। यजु०

(वः) तुम्हारा (निषदनम्) घर (अश्वत्थे) पीपल के समान विनश्वर संसार में है। संसार नष्ट होने वाला है।

पर्णे वो वसतिष्कृता। यजु०

(वः) तुम्हारा (वसतिः) निवास (पर्णे) पत्ते पर (कृता) किया है। यह शरीर पीपल के पत्ते के समान विनश्वर है।

विष्णोः कर्माणि पश्यत। यजु०

(विष्णोः) व्यापक परमेश्वर के (कर्माणि) कर्मों को (पश्यत) देखो। परमेश्वर का कर्म यह सृष्टि रचना है। इससे उसकी महिमा का ज्ञान प्राप्त करो।

इन्द्रस्य युज्यः सखा। यजु०

वह विष्णु व्यापक होने से (इन्द्रस्य) आत्मा का (युज्यः) मिला हुआ (सखा) साथी है।

परमात्मा जीवात्मा में भी व्यापक है और उसका सच्चा सखा है जिससे अपने सुख दुःख की बातें कही जा सकती हैं।

श्रद्धयासत्यमाप्यते। यजु०

(श्रद्धया) श्रद्धा से (सत्यम्) सत्य परमात्मा (आप्यते) प्राप्त होता है श्रद्धा से परमेश्वर की उपासना करो।

यंत्र ब्रह्म च क्षत्रंच सम्यंचौ चरतः सह तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवा सहाग्निना।

(यंत्र) जहाँ पर (ब्रह्म) ज्ञान (च) और (क्षत्रम्) बल (सम्यंचौ) मिलकर (सह) एक साथ (चरतः) रहते हैं (तंलोकम्) उस जीवन को (पुण्यम्) पवित्र (प्रज्ञेषम्) जानो (यंत्र) जहाँ (देवाः) देवता (अग्निना सह) अग्नि के साथ रहते हैं।

जीवन में शस्त्र और शास्त्र वल दोनों को अपनाओ तभी जीवन पूर्ण होगा।

ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च सी जायताम्। यजु०

(ब्राह्मणः) ब्राह्मण (ब्रह्मवर्चसी) ज्ञान के तेजवाले (जायताम्) उत्पन्न हों। ब्राह्मण को ज्ञानी होना चाहिये।

युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। यजु०

(अस्य) इस (यजमानस्य) यजमान के (युवावीरः) बहादुर युवक (जायताम्) उत्पन्न होवें। सन्तान को बहादुर बनाओ।

चित्तं वात इव ध्रजीमान्। यजु०

(चित्तम्) बुद्धि (वात इव), वायु की तरह (ध्रजीमान्) चंचल है। बुद्धि सात्विक बना कर स्थिर करो।

केतुं कृण्वन् अकेतवे। यजु०

(अकेतवे) ज्ञानहीन के लिये (केतुम्) ज्ञान को (कृण्वन्) देते रहो। विद्या का प्रचार करते रहो।

विश्वाहा वयम् सुमनस्यमाना। यजु०

(वयम्) हम (विश्वाहा) दिनभर (सुमनस्यमाना) प्रसन्न रहें।

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ। यजु०

हे परमेश्वर (ते) तुम्हारी (श्रीः) सरस्वती विद्या (च) और (लक्ष्मी) धन (पत्न्यौ) पत्नी हैं परमेश्वर ही विद्या और धन का (पति) स्वामी है ऐसा मानो।

नैनमूर्ध्वं न तिर्यचं न मध्ये परिजग्रभत्। यजु०

(एनम्) उस परमेश्वर को (न) न तो (ऊर्ध्वम्) ऊपर से सिर से (न) न (तिर्यचम्) गर्दन से (न) और न (मध्ये) बीच से कमर से (परिजग्भत्) कोई पकड़ सकता है।

परमेश्वर निराकार है अतः उसे हाथों से पकड़ा नही जा सकता।

वेनस्तत्पश्यन्निहितंगुहा सत् यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्।

यजु०

है (वेनः) गति शील जीवात्मा (गुहा) बुद्धि में (सत्) सत्य परमात्मा (निहितम्) विद्यमान है (यत्र) जहाँ (तत्) उसे (पश्यन्) देखते हुए (विश्वम्) संसार (एकनीडम्) एक घोंसले के समान एक परिवार (भवतिं) हो जाता है।

ईश्वर का सही ज्ञान हो जाने पर पूरा संसार एक परिवार दिखाई देने लगता है। संसार को अपना परिवार मानो।

शुद्धम् अपाप विद्धम्। यजु०

परमात्मा (शुद्धधम्) शुद्ध है पवित्र है (अपापविद्धम्) पाप के कर्म कभी नहीं करता। परमात्मा को संसार के पाप पुण्य के कर्म करने वाला कभी मत समझो।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास: एते सं भ्रातर: । ऋग्०

(अज्येष्ठास:) छोटे (अकनिष्ठास:) बड़े (एते) ये सब (संभ्रातर:) समान भाई हैं। गरीब अमीर छोटे बड़े सभी मानव एक दूसरे को भाई मानें।

सर्वा आशा मम मित्रम् भवन्तु । अथ०

(सर्वा आशा) सभी दिशाओं में रहने वाले मनुष्य (मम) मेरे (मित्रम्) मित्र (भवन्तु) होवें। विश्व के सभी मानवों को मित्र मानो।
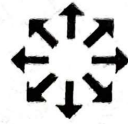
उपसंहार

दस प्रकार अनेकों वाक्य वेदों में विधि एवं निषेध के भरे पड़े हैं। जितने वाक्य लिखे हैं यदि उन्हीं पर मानव चलना प्रारम्भ कर देवे तो निश्चय ही उसका कल्याण हो जावे। वेद ईश्वर का आदेश है। ईश्वर के सच्चे भक्त एवम् आस्तिक उन्हें ही मानना चाहिये जो वेद को ईश्वर का संविधान मानकर उस पर चलते हैं।

ईश्वर ज्ञान स्वरुप है वेद ज्ञान उसी ने दिया है। वेद ईश्वर का आदेश है। वेदोक्त करने योग्य कर्मों को करो और न करने योग्य कर्मों को मत करो। वेद भक्त ही सच्चा ईश्वर भक्त है। ईश्वर की आज्ञा पालन करने वाला है। सच्चा उपासक है। अत: वेद मार्ग पर सदा चलते रहो।

संक्षिप्त परिचय

डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री ने गुरूकुलीय शिक्षा को प्राप्त कर शिक्षा के क्षेत्र में अनेक उपाधियां प्राप्त की उन्होंने नव्य व्याकरण शास्त्री। एम. ए. संस्कृत। एम. ए. हिन्दी। व्याकरण वाचस्पति। विद्या भास्कर। साहित्य रत्न। पी. एच. डी. संस्कृत। आदि उपाधियां प्राप्त की। सार्वदेशिक सभा ने दयानन्द पुरस्कार से पुरस्कृत किया। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठानम् उज्जैन ने श्रेष्ठ वैदिक विद्वान के रूप में पुरस्कृत किया। उन्होंने अनेकों शोधपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है। लेखक, कवि, योग शिक्षक, प्रभावशाली प्रवक्ता के रूप में वे सम्पूर्ण आर्य जगत में जाने जाते हैं गो रक्षा आन्दोलन में जेल यात्रा भी की है। अब भी वैदिक साहित्य लिखने में तथा वेद प्रचार के कार्य में संलग्न है।

रचनाएं -

१. त्रैतवाद का उद्‌भव और विकास (शोध ग्रन्थ)
२. योग का सही मार्ग
३. सरल गीता ज्ञान
४. जीवात्मा क्या है ?
५. वेद सुरभि
६. भूत प्रेत क्या है ?
७. आर्य समाज की मान्यताएं
८. वेदों में विधि एवम् निषेध वाक्य
९. गायत्री अमृत वाणी
१०. वेदों में आलंकारिक कथाएँ

ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म्

जागृति प्रेस जम्मू दूरभाष : 578773 लेजर कम्पोजिंग माइक्रो लेजर दिल्ली दूरभाष : 5707189